Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. VIII, Issue No. XVI, October-2014, ISSN 2230-7540

स्वामी दयानन्द सरस्वती-विश्व में आर्य समाज का प्रसार

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. VIII, Issue No. XVI, October-2014, ISSN 2230-7540

स्वामी दयानन्द सरस्वती-विश्व में आर्य समाज का प्रसार

Dr. Vishavjeet Singh*

Assistant Professor, Department of Political Science, D.A.V College, Pundri, Kaithal

सार – *क्या कारण है कि हमारा एक धर्म है। यह प्रश्न ऐसा है जो पिछले दिनों में ही पहली बार नहीं पूछा गया है फिर भी यह प्रश्न है जो उन कानों को भी चकृत कर देता है जो अनेक संग्रामों के तुमुल नाद से कठोर से हो गये हैं और वे संग्राम भी ऐसे जो सत्य की विजय के लिए लड़े गये थे। हमारा अस्तित्व ही किस प्रकार हुआ, हम अनुभूमि कैसे करते हैं, हम सिद्धांत कैसे बनाते हैं, हम अनुभूमि और सिद्धांत की तुलना कैसे करते हैं, उनको कैसे घटाते-बढ़ाते हैं और कैसे गुणित और विभाजित करते हैं। ये सब समस्याएं ऐसी हैं जिनसे न्यूनाधिक सभी परिचित है और प्रत्येक में प्लेटों, अरिस्टाटल, ह्यूमया कैन्ट के ग्रन्थों के पन्ने खोलने के साथ ही ये प्रश्न सोचे गये होंगे। इंद्रिय-ज्ञान, अनुभूमि, कल्पना और विवके सब कुछ जो हमारी चेतनता में विद्यमान हैं सबको अपने अस्तित्व के कारण और अधिकार की रक्षा आवश्यक है। फिर भी यह प्रश्न है कि हम विश्वास क्यों करते हैं। हमारा अस्तित्व ही क्यों है या हम क्यों कल्पना करते हैं कि हमें उनका ज्ञान है जिनकी अनुभूमि हम न तो इंद्रियों से कर सकते हैं और न विवके से ही प्रतिपादन कर सकते हैं। यह प्रश्न बहुत ही सरल जान पड़ता है किन्तु इस प्रश्न पर बड़े-बड़े दार्शनिकों ने भी प्रायः उतना ध्यान नहीं दिया है जितना देना चाहिए।[1] उन्नीसवीं शताब्दी यूं तो समाज सुधारकों और धर्म सुधारकों का युग है और इस युग में कई ऐसे महापुरूष हुए जिन्होंने समाज में व्याप्त अंधकार को दूर कर नयी किरण दिखाने की चेष्टा की। इनमें आर्य समाज के संस्थापक दयानन्द सरस्वती का नाम सर्वप्रमुख है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज के माध्यम से भारतीय संस्कृति को एक श्रेष्ठ संस्कृति के रूप में पुरस्थापित किया। ये हिन्दु समाज के रक्षक थे। आर्य समाज आंदोलन भारत के बढ़ते पाश्चात्य प्रभावों की प्रतिक्रिया के रूप में हुआ था। उन्होंने "वेदों की ओर लौटने-ठंबा जव टमकं" का नारा बुलंद किया था।*

----------X----------

स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म

स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म 1824 ई. में काठियावाड़, गुजरात में हुआ था। उनके बचपन का नाम मूलशंकर था। बालक मूलशंकर को अपने बाल्यकाल से ही सामाजिक कुरीतियों और धार्मिक आडम्बरों से चिढ़ थी। स्वामी दयानन्द को भारत के प्राचीन धर्म और संस्कृति में अटूट आस्था थी। उनका कहना था कि वेद भगवान् द्वारा प्रेरित हैं और समस्त ज्ञान के स्रोत हैं। उनके अनुसार वैदिक धर्म के प्रचार से ही व्यक्ति, समाज और देश की उन्नति संभव है। अतः दयानन्द सरस्वती ने अपने देशवासियों को पुनः वेदों की ओर लौटने का संदेश दिया। आर्य समाज की स्थापना के द्वारा उन्होंने हिन्दू समाज में नवचेतना का संचार किया।

आर्य समाज-

आर्य समाज 19वीं शताब्दी में शुरू हुए सुधार आंदोलनों में सबसे प्रभावशाली था। इस सुधार आंदोलन को उस समय हिन्दु धर्म की प्रतिक्रियाओं, ईसाई मिशनरी और ब्रिटिश उपनिवेशवाद के आकार में यूरोपीय आधुनिकता की चुनौतियों का सामना करना था। भारत के भौतिक सम्बंधों के साथ-साथ ग्रेटब्रिटेन के धार्मिक सम्बंधों का भी भारतीय सभ्यता पर प्रभाव पड़ा।[2] इस आंदोलन का प्रभाव केवल अपने अनुयायियों की संख्या से नहीं नापा जा सकता जो कि 1947 के अंत तक 20 लाख तक पहुंच गई थी, बल्कि इस तथ्य से कि इसके अनेक नेताओं ने बीसवीं सदी के दौरान भारतीय राजनीति, शिक्षा, पत्रकारिता और सार्वजनिक जीवन के अन्य क्षेत्रों में महत्वपूर्ण स्थान हासिल किया। उत्तर भारत की उस समय की विशेष ऐतिहासिक स्थिति में, एक विचारधारा के साथ आर्य समाज ने लोगों को बहुत प्रभावित किया।

आर्य समाज की उत्पत्ति और प्रारम्भिक विकास

आर्य समाज की पहली शाखा स्वामी दयानन्द सरस्वती (1824-1833) द्वारा 1875 में बंबई में स्थापित की गई थी। दयानन्द एक गुजराती शैव ब्राह्मण थे। दयानन्द अपनी जवानी के दिनों में ही हिन्दू धर्म की विशेषताओं बहुदेववाद और उथले कर्मकाण्डवाद के अपने अनुभवों से असंतुष्ट हो गये थे। 1850

www.ignited.in

के दशक और 1860 के दशक में दयानन्द एक संन्यासी के रूप में भटकते रहे, इन वर्षों के दौरान उन्होंने एक सुधार और "शुद्ध" आर्य धर्म की अपनी दृष्टि का निर्माण किया। दयानन्द सरस्वती के विचार में हिन्दू समाज में व्याप्त अंधविश्वास और सामाजिक बुराइयों जैसे मूर्ति पूजा का प्रसार, बाल-विवाह, जाति व्यवस्था का हनन, महिलाओं के दमन का मूल कारण मनमाने और स्वाथी ब्राह्मण थे। पंडितों ने वेदों के अध्ययन जिसमें एक आदर्श समाज के लिए दिशा-निर्देश निहित था, को उपेक्षित कर पुराणों के अध्ययन पर ज्यादा जोर दिया था। इनका विश्वास था कि सौम्य और तर्कसंगत एकेश्वरवाद की वापसी वैदिक शास्त्रों द्वारा ही हो सकती है और यह भारत की आध्यात्मिक, सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं का हल प्रदान करना भी सुनिश्चित करेगा, जिसे हिन्दुओं ने उनके गर्व आर्य पूर्वजों से दूर छोड़ दिया है।[3]

अपने विचारों का प्रसार करने के लिए स्वामी जी ने जन-संचार की नई तकनीकों का भी प्रयोग किया, जिसके अंतर्गत उन्होंने कई पर्चे निकाले और अपने विचारों को अपनी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश में शाब्दिक संशोधनों द्वारा व्याख्या भी की। अपनी इस किताब में उन्होंने ईसाइयत, इस्लाम, सिख और हिन्दू धर्म के कट्टरपंथियों की आलोचना की, जिसकी वजह से आर्य समाज अपनी स्थापना के समय से ही विवादास्पद बना रहा। एक समय में कई शिक्षित हिन्दुओं की मुश्किल यह थी कि वह अपनी धार्मिक परम्परा के साथ अपने नई पश्चिमी ज्ञान के साथ सामंजस्य कैसे बैठाएं, यहां हिन्दी भाषी क्षेत्रों के शहरी केन्द्रों में पश्चिमी सभ्यता में शिक्षित मध्यम वर्ग विशेष रूप से पंजाब में आर्य समाज काफी लोकप्रिय हो गया। 1883 में अपने संस्थापक की मृत्यु के बाद यह आंदोलन बंद नहीं हुआ बल्कि सार्वजनिक गतिविधि के विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्ट रूप से इसका विस्तार होता रहा। 1886 में दयानन्द एंग्लो वैदिक हाई स्कूल लाहौर में स्थापित किया गया जो शैक्षिक संस्थानों के एक काफी सफल नेटवर्क का नाभिक बन गया और यह आज भी जारी है। अपनी स्थापना के प्रारम्भिक चरण में आर्य समाज ने कुशल ऊर्जावान संगठन और अपने विचारों के प्रचार-प्रसार के लिए धन उगाहने का भी काम किया, जो कि आंशिक ईसाई मिशनरियों द्वारा प्रेरित था और आंशिक रूप से इसमें हिन्दू परम्परा के तत्वों का पुनर्नवीनीकरण किया गया था।

आर्य समाज का अर्थ-

स्वामी दयानन्द ने अपने सिद्धांतों को व्यावहारिकता देते, अपने धर्म को फैलाने तथा भारत व विश्व को जाग्रत करने के लिए जिस संस्था की स्थापना की उसे 'आर्य समाज' कहते हैं। 'आर्य' का अर्थ है भद्र एवं 'समाज' का अर्थ है सभा। अतः आर्य समाज का अर्थ है 'भद्रजनों का समाज' या 'भद्रसभा'। आर्य प्राचीन भारत का प्रेमपूर्ण एवं धार्मिक नाम है जो भद्र पुरूषों के लिए प्रयोग में आता था। स्वामी जी ने देशभक्ति की भावना जगाने के लिए यह नाम चुना। यह धार्मिक से भी अधिक सामाजिक एवं राजनीतिक महत्व रखता है। इस प्रकार यह अन्य धार्मिक एवं सुधारवादी संस्थाओं से भिन्नता रखता है, जैसे-ब्रह्मसमाज (ईश्वर का समाज), प्रार्थना समाज आदि।

आर्य समाज की स्थापना-

दयानन्द सरस्वती ने सम्भवतः 7 या 10 अप्रैल सन् 1875 ई. को बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की। इसका उद्देश्य वैदिक धर्म को पुनः शुद्ध रूप से स्थापित करने का प्रयास, भारत को धार्मिक, सामाजिक व राजनीतिक रूप से एक सूत्र में बांधने का प्रयत्न, पाश्चात्य प्रभाव को समाप्त करना आदि था। 1824 ई. में गुजरात के मौरवी नामक स्थान पर पैदा हुए स्वामी दयानन्द को बचपन में 'मूलशंकर' के नाम से जाना जाता था। 21 वर्ष की अवस्था में मूलशंकर ने गृह त्याग कर घुमक्कड़ों का जीवन स्वीकार किया। 24 वर्ष की अवस्था में उनकी मुलाकात दण्डी स्वामी पूर्णानन्द से हुई। इन्हीं से संन्यास की दीक्षा लेकर मूलशंकर ने दण्ड धारण किया। दीक्षा प्रदान करने के बाद दण्डी स्वामी पूर्णानन्द ने मूलशंकर का नाम 'स्वामी दयानन्द सरस्वती' रखा। ज्ञान की खोज में भटकने के बाद 1861 ई. में स्वामी ने दयानन्द को वेदों की दार्शनिक व्याख्या का परिचय कराया। दयानन्द ने इन्हें गुरू बना लिया। वेदों और भारतीय दर्शन के गहन अध्ययन के बाद स्वामी जी ने यह निष्कर्ष निकाला कि आर्य श्रेष्ठ हैं, वेद ही ईश्वरी ज्ञान है तथा भारत भूमि ही श्रेष्ठ है।

मान्यताएं

ईश्वर का सर्वोत्तम और निज नाम ओम है। उसमें अनंत गुण होने के कारण उसके ब्रह्मा, महेश, विष्णु, गणेश, देवी, अग्नि, शनि वगैरह अनंत नाम हैं। इनकी अलग-अलग नामों से मूर्ति पूजा ठीक नहीं है। आर्य समाज वर्णव्यवस्था यानी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र को कर्म से मानता है, जन्म से नहीं। आर्य समाज स्वदेशी, स्वभाषा, स्वसंस्कृति और स्वधर्म का पोषक है। आर्य समाज की सृष्टि की उत्पत्ति का समय चार अरब 32 करोड़ वर्ष और इतना ही समय प्रलय काल का मानता है। योग से प्राप्त मुक्ति का समय वेदों के अनुसार 31 नील 10 खरब 40 अरब यानी एक परांत का मानता है। आर्य समाज वसुधैव कुटुम्बकम् को मानता है। लेकिन भूमंडलीकरण को देश, समाज और संस्कृति के लिए घातक मानता है। आर्य समाज वैदिक समाज रचना के निर्माण व आर्य चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने के लिए

प्रयासरत है। इस समाज में मांस, अंडे, बीड़ी, सिगरेट, शराब, चाय, मिर्च-मसाले वगैरह वेद विरूद्ध होते हैं।

आर्यसमाज के सिद्धांत

आर्य समाज के मुख्य सिद्धांत निम्नलिखित हैं-

1. सभी शक्ति और ज्ञान का प्रारम्भिक कारण ईश्वर है।
2. ईश्वर ही सर्व सत्य है, सर्व व्याप्त है, पवित्र है, सर्वज्ञ है, सर्वशक्तिमान है और सृष्टि का कारण है। केवल उसी की पूजा होनी चाहिए।
3. वेद ही सच्चे ज्ञान का ग्रन्थ हैं।
4. सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने के लिए सदा तत्पर रहना चाहिए।
5. उचित-अनुचित के विचार के बाद ही कार्य करना चाहिए।
6. मनुष्य मात्र को शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति के लिए कार्य करना चाहिए।
7. प्रत्येक के प्रति न्याय, प्रेम और उसकी योग्यता के अनुसार व्यवहार करना चाहिए।
8. ज्ञान की ज्योति फैलाकर अंधकार को दूर करना चाहिए।
9. केवल अपनी उन्नति से संतुष्ट न होकर दूसरों की उन्नति के लिए भी यत्न करना चाहिए।
10. समाज के कल्याण और समाज की उन्नति के लिए अपने मत तथा व्यक्तिगत बातों को त्याग देना चाहिए।

इनमें से प्रथम तीन सिद्धांत धार्मिक हैं और अंतिम सात नैतिक हैं। आगे चलकर व्यवहार के स्तर पर आर्य समाज में भी विचार-भेद पैदा हो गया। एक वर्ग 'दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेज' की विचारधारा की ओर चला और दूसरे ने 'गुरूकुल' की राह पकड़ी। यह उल्लेखनीय है कि देश के स्वतंत्रता-संग्राम में आर्य समाज ने संस्था के रूप में तो नहीं, पर सहसंस्था के अधिकांश प्रमुख सदस्यों ने व्यक्तिगत स्तर पर महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

आर्य समाज और भारत का नवजागरण

आर्य समाज ने भारत में राष्ट्रवादी विचारधारा को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान किया है। इसके अनुयायियों ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। आर्य समाज के प्रभाव से ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भीतर स्वदेशी आंदोलन आरम्भ हुआ था। स्वामीजी आधुनिक भारत के धार्मिक नेताओं में प्रथम महापुरूष थे जिन्होंने 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया। आर्य समाज ने हिन्दू धर्म में एक नयी चेतना का आरम्भ किया था। स्वतंत्रता पूर्व काल में हिन्दु समाज के नवजागरण और पुनरूत्थान आंदोलन के रूप में आर्य समाज सर्वाधिक शक्तिशाली आंदोलन था। यह पूरे पश्चिम और उत्तर भारत में सक्रिय था तथा सुप्त हिन्दू जाति को जागृत करने में संलग्न था। यहां तक कि आर्य समाजी प्रचारक फिजी, मॉरीशस, गयाना, ट्रिनिडाड, दक्षिण अफ्रीका में भी हिन्दुओं को संगठित करने के उद्देश्य से पहुंच रहे थे। आर्य समाजियों ने सबसे बड़ा कार्य जाति व्यवस्था को तोड़ने और सभी हिन्दुओं में समानता का भाव जागृत करने का किया।[4]

समाज सुधार

भारत को जिस तरह ब्रिरटिश सरकार का आर्थिक उपनिवेश और बाद में राजनीतिक उपनिवेश बना दिया गया था, उसके विरूद्ध भारतीयों की ओर से तीव्र प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक था। चूंकि भारत धीरे-धीरे पश्चिमी विचारों की ओर बढ़ने लगा था, अतः प्रतिक्रिया सामाजिक क्षेत्र से आना स्वाभाविक कार्य थी। यह प्रतिक्रिया 19वीं शताब्दी में उठ खड़े हुए सामाजिक सुधार आंदोलनों के रूप में सामने आई। ऐसे ही समाज सुधार आंदोलनों में आर्यसमाज का नाम आता है। आर्यसमाज ने विदेशी जुआ उतार फेंकने के लिए, समाज में स्वयं आंतरिक सुधार करके अपना कार्य किया। इसने आधुनिक भारत में प्रारंभ हुए पुर्नजागरण को नई दिशा दी। साथ ही भारतीयों में भारतीयता को अपनाने, प्राचीन संस्कृति को मौलिक रूप में स्वीकार करने, पश्चिमी प्रभाव को विशुद्ध भारतीयता यानी वेदों की ओर लोटो के नारे के साथ समाप्त करने तथा सभी भारतीयों को एकताबद्ध करने के लिए प्रेरित किया।

शिक्षा का प्रसार

स्वामी दयानन्द के मूलमंत्र था कि जनता का विकास और प्रगति सुनिश्चित करने और उनके अस्तित्व की रक्षा करने का सर्वोत्तम साधन शिक्षा है। इसी मंत्र को गांठ में बांधकर आर्यसमाज ने कार्य किया। आर्यसमाज ने इस तथ्य को आत्मसात कर लिया था कि शिक्षा की जड़ें राष्ट्रीय भावना और परम्परा में गहरी जमी होनी चाहिए। हम एक प्राचीन और श्रेष्ठ परम्परा के उत्तराधिकारी हैं। हमारी शिक्षा में भारतीय नीतिशास्त्र और दर्शन को सर्वोपरि स्थान प्राप्त होगा। शिक्षा के क्षेत्र में गुरूकुल व डीएवी कॉलेज स्थापित कर शिक्षा जगत में

www.ignited.in

आर्यसमाज ने अग्रणी भूमिका निभाई। स्त्रीशिक्षा में आर्यसमाज का उल्लेखनीय योगदान रहा। 1885 के प्रारम्भ तक आर्यसमाज की अमृतसर शाखा ने दो महिला विद्यालयों की स्थापना की घोषणा की थी तथा तीसरा कटरा डुला में प्रस्तावित था। 1880 के दौरान लाहौर आर्यसमाज महिला शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी बना हुआ था। 1889 ई. में फिरोजपुर आर्यसमाज ने एक कन्या विद्यालय स्थापित किया था।

कुरीतियों पर प्रहार

देश में प्रचलित सभी धार्मिक और सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ स्वामी दयानन्द सरस्वती ने बड़ा कदम उठाया। उन्होंने जाति भेद, मूर्ति पूजा, सती-प्रथा, बहु विवाह, बाल विवाह, बलि-प्रथा आदि प्रथाओं का घोर विरोध किया। दयानन्द सरस्वती ने पवित्र जीवन तथा प्राचीन हिन्दू आदर्श के पालन पर बल दिया। उन्होंने विधवा विवाह और नारी शिक्षा की भी वकालत की। सबसे ज्यादा उन्हें जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता से चिढ़ थी और इसे समाप्त करने के लिए उन्होंने कई कठार कदम उठाए। आर्य समाज की स्थापना कर उन्होंने अपने सारे विचारों को मूर्त रूप प्रदान करने की चेष्टा की। 1877 ई. में लाहौर में आर्य समाज के शाखा की स्थापना की गई थी।[5]

धार्मिक एवं नैतिक सिद्धांतः-

ऊपर के दस सिद्धांतों में से प्रथम तीन जो ईश्वर के अस्तित्व, स्वभाव तथा वैदिक साहित्य के सिद्धांत को दर्शाते हैं, धार्मिक सिद्धांत हैं। अंतिम सात नैतिक सिद्धांत है। आर्य समाज का धर्मविज्ञान वेद के ऊपर अवलम्बित है। स्वामीजी वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानते थे और धर्म के सम्बंध में अंतिम प्रमाण। आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने देखा कि देश में अपने ही विभिन्न मतों व सम्प्रदायों के अतिरिक्त विदेशी इस्लाम एवं ईसाई धर्म भी जड़ पकड़ रहे हैं। दयानन्द के सामने यह समस्या थी कि कैसे भारतीय धर्म का सुधार किया जाए।[6] किस प्रकार प्राचीन एवं अर्वाचीन का तथा पश्चिम एवं पूर्व के धर्म व विचारों का समन्वय किया जाए, जिसये भारतीय गौरव फिर स्थापित हो सके। इसका समाधान स्वामी दयानन्द ने 'वेद' के सिद्धांतों में खोज निकाला, जो ईश्वर के शब्द हैं।

वैदिक सिद्धांत

स्वामी दयानन्द के वैदिक सिद्धांत को संक्षेप में इस प्रकार समझा जा सकता है- 'वेद' शब्द का अर्थ ज्ञान है। यह ईश्वर का ज्ञान है इसलिए पवित्र एवं पूर्ण है। ईश्वर का सिद्धांत दो प्रकार से व्यक्त किया गया है।

1. चार वेदों के रूप में, जो चार श्रषियों (अग्नि, वायु, सूर्य एवं अंगिरा) को सृष्टि के आरम्भ में अवगत हुए।
2. प्रकृति या विश्व के रूप में, जो वेदविहित सिद्धांतों के अनुसार उत्पन्न हुआ। वैदिक साहित्य-ग्रन्थ एवं प्रकृति-ग्रन्थ से यहां साम्य प्रकट होता है। स्वामी दयानन्द कहते हैं, 'मैं वेदों को स्वतः प्रमाणित सत्य मानता हूं। ये संशयरहित हैं एवं दूसरे किसी अधिकारी ग्रन्थ पर निर्भर नहीं रहते। ये प्रकृति का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो ईश्वर का साम्राज्य है।' वैदिक साहित्य के आर्य सिद्धांत को यहां संक्षेप में दिया जाता है-

- वेद ईश्वर द्वारा व्यक्त किये गये हैं जैसा कि प्रकृति के उनके सम्बंध से प्रमाणित है।
- वेद ही केवल ईश्वर द्वारा व्यक्त किये गये हैं क्योंकि दूसरे ग्रन्थ प्रकृति के साथ यह सम्बंध नहीं दर्शाते।
- वे विज्ञान एवं मनुष्य के सभी धर्मों के मूल स्त्रोत हैं।

आर्य समाज के कत्र्तव्यों में से सिद्धांत दो महत्वपूर्ण हैं:-

1. भारत को (भूले हुए) वैदिक पथ पर पुनः चलाना और
2. वैदिक शिक्षाओं को सम्पूर्ण विश्व में प्रसारित करना।

पूजा पद्धतिः-

साप्ताहिक धार्मि सत्संग प्रत्येक रविवार को प्रातः होता है, क्योंकि सरकारी कर्मचारी इस दिन छुट्टी पर होते हैं। यह सत्संग तीन या चार घण्टे का होता है। भाषण करने वाले के ठीक सामने पूजास्थान में वैदिक अग्निकुण्ड रहता है। धार्मिक पूजा हवन के साथ प्रारम्भ होती है। साथ ही वैदिक मंत्रों का पाठ होता है। पश्चात् प्रार्थना होती है। फिर दयानन्द-साहित्य का प्रवचन होता है, जिसका अंत समाज गान से होता है। इसमें स्थायी पुरोहित या आचार्य नहीं होता। योग्य सदस्य अपने क्रम से प्रधान-वक्ता या पूजा-संचालक का स्थान ग्रहण करते हैं।

कार्यप्रणालीः-

आर्य समाज दूसरे प्रचारवादी धर्मों के समान भाषण, शिक्षा, समाचार, पत्र आदि की सहायता से अपना मत-प्रचार करता है। दो प्रकार के शिक्षक है-

- प्रथम वेतनभोगी और
- द्वितीय, अवैतनिक।

अवैतनिक में स्थानीय वकील, अध्यापक, व्यापारी, डॉक्टर आदि लोग होते हैं। जबकि वेतनभोगी सम्पूर्ण समय देने वाले शास्त्रज्ञ और विद्वान् प्रचारक होते हैं। पहला दल शिक्षा पर ज़ोर देता है; दूरा दल उपदेश और संस्कार पर बल देता है। आर्य समाज का प्रत्येक संगठन कुछ हाईस्कूल, गुरूकुल, अनाथालय आदि की व्यवस्था करता है। यह मुख्यतः उत्तर भारतीय धार्मिक आंदोलन है यद्यपि इसके कुछ केन्द्र दक्षिण भारत में भी हैं। वर्मा तथा पूर्वी अफ्रीका, मॉरिशस, फीजी आदि में भी इसकी शाखाएं हैं जो वहां बसे हुए भारतीयों के बीच कार्य करती हैं। आर्य समाज का केन्द्र एवं धार्मिक राजधानी लाहौर में थी, यद्यपि अजमेर में स्वामी दयानन्द की निर्वाणस्थली एवं वैदिक-यंत्रालय (प्रेस) होने से वह लाहौ का प्रतिद्वंद्वी था। लाहौर के पाकिस्तान में चले जाने के पश्चात् आर्य समाज का मुख्य केन्द्र आजकल दिल्ली है।[7]

सुधारवादी एवं लोकप्रिय संस्थाः-

यह उत्तर भारत की सबसे मूल सुधारवादी एवं लोकप्रिय संस्था है। स्त्रीशिक्षा, हरिजनसेवा, अस्पृश्यता-निवारण एवं दूसरे सुधारों में यह प्रगतिशील है। वेदों को सभी धर्म का मूल आधार एवं विश्व के विज्ञान का स्त्रोत बताते हुए, यह देशभक्ति को भी स्थापित करता है। इसके सदस्यों में से अनेक ऐसे हैं जो वास्तविक देश हितैषी एवं देशप्रेमी है। शिक्षा तथा सामाजिक सुधार द्वारा यह भारत का खोया हुआ पूर्व-गौरव लाना चाहता है। लगभग पिछले बीस-पच्चीस वर्षों से आर्यसमाज का साहित्य पर प्रभाव एक प्रकार से नगण्य है। वास्तव में आर्यसमाज एक ऐसा आंदोलन था, जिसने देश की एक ऐतिहासिक आवश्यकता पूरी की। शिक्षा, समाजसुधार, धर्मसुधार आदि क्षेत्रों में उसके द्वारा प्रचलित लगभग सभी बातें देश द्वारा स्वीकृत हो जाने के फलस्वरूप उसकी गतिशीलता समाप्त हो गयी।[8]

आर्य समाज का योगदान

आर्य समाज शिक्षा, समाज-सुधार एवं राष्ट्रीयता का आंदोलन था। भारत के 85 प्रतिशत स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, आर्य समाज ने पैदा किया। स्वदेशी आंदोलन का मूल सूत्रधार आर्यसमाज ही है। स्वामी जी ने धर्म परिवर्तन कर चुके लोगों को पुनः हिन्दू बनने की प्रेरणा देकर शुद्धि आंदोलन चलाया। आज विदेशों तथा योग जगत में नमस्ते शब्द का प्रयोग बहुत साधारण बात है। एक जमाने में इसका प्रचलन नहीं था-हिन्दु लोग भी ऐसा नहीं करते थे। आर्यसमाजियों ने एक-दूसरे को अभिवादन करने का ये तरीका प्रचलित किया। ये अब भारतीयों की पहचान बन चुका है। स्वामी दयानन्द ने हिन्दी भाषा में सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक तथा अनेक वेदभाष्यों की रचना की। एक शिरोल नामक एक अंग्रेज ने तो सत्यार्थ प्रकाश को ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें खोखली करने वाला लिखा था। सन् 1886 में लाहौर में स्वामी दयानन्द के अनुयायी लाला हंसराज ने दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेज की स्थापना की थी। सन् 1901 में स्वामी श्रद्धानन्द ने कांगड़ी में गुरूकुल विद्यालय की स्थापना की।

दयानन्द सरस्वती की मृत्यु

दयानन्द सरस्वती की मृत्यु के बाद आर्य समाज दो भागों में बंट गया, एक दल का नेतृत्व लाला हरदयाल करते जो पश्चिमी शिक्षा पद्धति के समर्थक थे, दूसरे दल का नेतृत्व महात्मा मुंशी राम करते थे जो प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति के समर्थक थे, आर्य समाज के प्रयास से अनेक अनाथालयों, गोशालाओं और विधवा आश्रमों का निर्माण किया गया, इस प्रकार हम देखते हैं कि दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज आंदोलन के माध्यम से हिन्दू समाज में नवचेतना और आत्मसम्मान का संचार किया, इस आंदोलन के द्वारा धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में जो परिवर्तन हुआ उससे एक नयी राजनीतिक चेतना का जन्म हुआ और हमने अपनी संस्कृति की रक्षा हेतु अंग्रेजों के विरूद्ध आवाज बुलंद की।[9]

आर्य समाज एक हिन्दू सुधार आंदोलन है जिसकी स्थापना स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 1875 में बम्बई में मथुरा के स्वामी विरजानन्द की प्रेरणा से की थी। यह आंदोलन पाश्चात्य प्रभावों की प्रतिक्रिया स्वरूप हिन्दु धर्म में सुधार के लिए प्रारम्भ हुआ था। आर्य समाज मंे शुद्ध वैदिक परम्परा में विश्वास करते थे तथा मूर्ति पूजा, अवतारवाद, बलि, झूठे कर्मकाण्ड व अंधविश्वासों को अस्वीकार करते थे। इसमें छुआछूत व जातिगत भेदभाव का विरोध किया तथा स्त्रियों व शुद्रों को भी यज्ञोपवीत धारण करने व वेद पाठ पढ़ने का अधिकार दिया था। स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रन्थ आर्य समाज का मूल ग्रन्थ है। आर्य समाज का आदर्श वाक्य हैः कृण्वन्तों विश्वमार्यम्, जिसका अर्थ है - विश्व को आर्य बनाते चलो। प्रसिद्ध आर्य समाजी जनों में स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द, पंडित गुरूदत्त, स्वामी आनन्दबोध सरस्वती, स्वामी अछूतानन्द, चैधरी चरण सिंह, पंडित वन्देमातरम रामचन्द्र राव, बाबा रामदेव आदि आते हैं।

संदर्भ सूची

1. ब्रह्मदत्त दीक्षित ‘ललाम’, “धर्म की उत्पत्ति और विकास”, मालवीय नगर इलाहाबाद, 1968, पृष्ठ नं. 9

2. डॉ. राधाकृष्णन, "धर्म तुलनात्मक दृष्टि में", मदन हाफटोन कम्पनी दिल्ली, 1969, पृष्ठ नं. 34

3. स्वामी सर्वदानन्द, "आनन्द उपदेश-माला", गांधीनगर दिल्ली, 1971, पृष्ठ नं. 11

4. लाला लाजपत राय, अनुवादक प्रौ. भवानी लाल "आर्यसमाज", अजमेरी गेट दिल्ली, संस्करण 2001

5. गंगा प्रसाद उपाध्याय, "राष्ट्र निर्माता स्वामी दयानन्द", आर्य प्रकाशन दिल्ली, 2007, पृष्ठ नं. 11

6. डॉ. मंजुलता विद्यार्थी, "श्रषि दयानन्द की हिन्दी भाषा और साहित्य को देन", गांधीनगर, दिल्ली, 1999, पृष्ठ नं. 30

7. डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी, "आर्य समाज का इतिहास", नवीन शाहदरा, दिल्ली, 2010, पृष्ठ नं. 39

8. डॉ. भवानी लाल भारतीय, "श्रषि दयानन्द का क्रांतिकारी चिन्तन" विकास मार्ग दिल्ली, 2007, पृष्ठ नं. 46

9. ब्रह्मदत्त दीक्षित 'ललाम', "धर्म की उत्पत्ति और विकास", वहीं पृष्ठ नं. 10

Corresponding Author

Dr. Vishavjeet Singh*

Assistant Professor, Department of Political Science, D.A.V College, Pundri, Kaithal

rana.vishavjeet@gmail.com